

राक्षस का भय-पंचतंत्र

एक नगर में भद्रसेन नाम का राजा रहता था। उसकी कन्या रत्नवती बहुत रूपवती थी। उसे हर समय यही डर रहता था कि कोई राक्षस उसका अपहरण न करले । उसके महल के चारों ओर पहरा रहता था, फिर भी वह सदा डर से कांपती रहती थी । रात के समय उसका डर और भी बढ़ जाता था ।

एक रात एक राक्षस पहरेदारों की नजर बचाकर रत्नवती के घर में घुस गया । घर के एक अंधेरे कोने में जब वह छिपा हुआ था तो उसने सुना कि रत्नवती अपनी एक सहेली से कह रही है "यह दुष्ट विकाल मुझे हर समय परेशान करता है, इसका कोई उपाय कर ।"

राजकुमारी के मुख से यह सुनकर राक्षस ने सोचा कि अवश्य ही विकाल नाम का कोई दूसरा राक्षस होगा, जिससे राजकुमारी इतनी डरती है । किसी तरह यह जानना चाहिये कि वह कैसा है ? कितना बलशाली है ? यह सोचकर वह घोड़े का रूप धारण करके अश्वशाला में जा छिपा ।

उसी रात कुछ देर बाद एक चोर उस राज-महल में आया । वह वहाँ घोड़ों की चोरी के लिए ही आया था । अश्वशाला में जा कर उसने घोड़ों की देखभाल की और अश्वरूपी राक्षस को ही सबसे सुन्दर घोडा देखकर वह उसकी पिठ पर चढ़ गया । अश्वरूपी राक्षस ने समझा कि अवश्यमेव यह व्यक्ति ही विकाल राक्षस है और मुझे पहचान कर मेरी हत्या के लिए ही यह मेरी पीठ पर चढ़ा है । किन्तु अब कोई चारा नहीं था । उसके मुख में लगाम पड चुकी थी । चोर के हाथ में चाबुक थी । चाबुक लगते ही वह भाग खडा हुआ ।

कुछ दूर जाकर चोर ने उसे ठहरने के लिए लगाम खींची, लेकिन घोडा भागता ही गया । उसका वेग कम होने के स्थान पर बढ़ता ही गया । तब, चोर के मन में शंका हुई, यह घोडा नहीं बल्कि घोड़े की सूरत में कोई राक्षस है, जो मुझे मारना चाहता है । किसी ऊबड़-खाबड जगह पर ले जाकर यह मुझे पटक देगा । मेरी हड्डी-पसली टूट जायेगी ।

यह सोच ही रहा था कि सामने वटवृक्ष की एक शाखा आई । घोडा उसके नीचे से गुजरा । चोर ने घोडे से बचने का उपाय देखकर शाखा को दोनों हाथों से पकड लिया । घोडा नीचे से गुजर गया, चोर वृक्ष की शाखा से लटक कर बच गया ।

उसी वृक्ष पर अश्वरूपी राक्षस का एक मित्र बन्दर रहता था । उसने डर से भागते हुये अश्वरूपी राक्षस को बुलाकर कहा-

"मित्र ! डरते क्यों हो ? यह कोई राक्षस नहीं, बल्कि मामूली मनुष्य है । तुम चाहो तो इसे एक क्षण में खाकर हजम कर लो ।"

चोर को बन्दर पर बडा क्रोध आ रहा था । बन्दर उससे दूर ऊँची शाखा पर बैठा हुआ था । किन्तु उसकी लम्बी पूँछ चोर के मुख के सामने ही लटक रही थी । चोर ने क्रोधवश उसकी पूँछ को अपने दांतों में भींच कर चबाना शुरू कर दिया । बन्दर को पीडा तो बहुत हुई लेकिन मित्र राक्षस के सामने चोर की शक्ति को कम बताने के लिये वह वहाँ बैठा ही रहा । फिर भी, उसके चेहरे पर पीडा की छाया साफ नजर आ रही थी।

उसे देखकर राक्षस ने कहा - "मित्र ! चाहे तुम कुछ ही कहो, किन्तु तुम्हारा चेहरा कह रहा है कि तुम विकाल राक्षस के पंजे में आ गये हो ।"

यह कह कर वह भाग गया ।

.....

सुवर्णसिद्धि बोला--" तो भाई! मुझे भी घर जाने की आज्ञा दो। तुम अपने लोभरूपी वृक्ष का फल यहाँ रहकर चखो।"

चक्रधर बोला--"भाई! यह तो बिना किसी कारण के ही हो गया।" मनुष्य को शुभ-अशुभ फल के भोग भाग्यवश भोगने ही पडते हैं। कहा गया है कि--

जिस रावण का दुर्ग त्रिकूट था, समुद्र खाई थी, योद्धा राक्षस थे, कुबेर से अटूट धन मिला था, जो स्वयं शुक्राचार्य की राजनीति का महान पण्डित था, वह भी दुर्भाग्य से विपत्ति के चक्र में पिस गया। और भी देखो कि--

अंधा, कुबड़ा और तीन स्तनों वाली राजकन्या--ये तीनों कर्म के सम्मुख उपस्थित होकर अन्याय से भी सिद्धि को प्राप्त हुए।

सुवर्णसिद्धि बोला--“यह कैसे ?”

उसने कहा--

अनुवाद - कुलदीप धर

ब्रह्म का रुच-पाठउंउ

एक नगर में रुद्रमेन नाम का राजा रहता था। उसकी कन्या राजानवती बहुत रूपवती थी। उसे हर मन्त्र बनी हर रहता था कि कैसे राजा उसका संपन्न न करले। उसके भूल के कारणें हर परा रहता था, फिर ही वह मरु हर में कंपनी रहती थी। राज के मन्त्र उस हर ही गुरु रहा।

एक रात एक राजा पराएणों की नएर गणकर राजानवती के घर में प्रभु गया। पर के एक संघर्ष केने में एरु वरु क्रिपा रुमु था उे उमने मुन कि राजानवती अपनी एक भुली में कर रही है "वरु प्रु विकाल भुए हर मन्त्र परमान करत है, उमका कैसे उपाय कर।"

राजकुमारी के भाप में वरु मुनकर राजा ने भेजा कि सवमु की विकाल नाम का कैसे प्रभु राजा देगा, एभमे राजकुमारी उतनी उरती है। किभी उरु वरु एनन गारुधे कि वरु कैभा है? किउना गलमाली है? वरु भेजकर वरु भेरे का रूप एरु करके समा वमाला में ए क्रिपा।

उभी रात कुल देर गुरु एक देर उम राजा-भूल में मुया। वरु वरु भेरे की देरी के लिए की मुया था। समा वमाला में ए कर उमने भेरे की टोपटाल की हर समा वरुपी राजा के की मग्ने मुन्र भेरे टोपकर वरु उमकी पि० पर गुरु गया। समा वरुपी राजा ने भुए कि सवमुभेव वरु वृत्ति की विकाल राजा है हर भुए पराएण कर भेरी रुद्र के लिए की वरु भेरी पी० पर

गड्डा है। किन्तु मग केरें गारा नहीँ घा। उमके भाप में लगाभ पर मुकी घी। गेर के काघ में गारुक घी। गारुक लगते की वरु हाग पठा रुमु।

कुळ दार एकर गेर ने उमे ०रने के लिए लगाभ पींणी, लेकिन भेरा हागडा की गया। उमका वेग कम केने के भून पर गड्डा की गया। उम, गेर के मन में मंका करें, वरु भेरा नहीँ गल्लि भेरु की मुरत में केरें गारुम है, ऐ भुए भारना गारुत है। किमी उमरु-पागुरु एगरु पर ले एकर वरु भुए पएक टिंग। मेरी रुही-पमली एए एवेगी।

वरु भेरा की रका घा कि भाभने वएवु की एक मापा मुरें। भेरा उमके नीठे में गुएरा। गेर ने भेरु में गटने का उपाय टापकर मापा के टैनें काघें में पकरु लिया। भेरा नीठे में गुएरा गया, गेर वरु की मापा में लएक कर गट गया।

उमी वरु पर ममा वरुपी गारुम का एक भिडु गचुर ररुता घा। उमने रु में हागते रुवे ममा वरुपी गारुम के वलाकर कला-

"भिडु! रुते कुं है? वरु केरें गारुम नहीँ, गल्लि भाभली भनुधु है। उम गारुते उमे एक बल्ल में पाकर रुएभ कर ले।"

गेर के गचुर पर गरा केण मु रका घा। गचुर उममें दार उीणी मापा पर गैण रुमु घा। किन्तु उमकी लभी पुंळ गेर के भाप के भाभने की लएक रली घी। गेर ने केणवम उमकी पुंळ के मपने टांते में छीण कर गगना मुरु कर दिय। गचुर के पीरा ते गरुत करें लेकिन भिडु गारुम के भाभने गेर की मक्ति के कम गटने के लिये वरु वरु गैण की रका। दिय ही, उमके गेरु पर पीरा की काघा भाद नएर मु रली घी।

उमै टोपकर राबम ने कहा - "भिड़! पाके तुम कुछ की कहे,
किन्तु तुम्हारा टोपका कर रहा है कि तुम विकाल राबम के पंख
में मु गये है।"

घर कर कर घर हाग गया।

.....

भुवळुभिस्त्रि गैला--“उे हागें! भुजि सी अर एने की मुळ टो। तुम
मपने लेखरुपी वृक्ष का ढल बरुन ररुकर पापे।”

एकपर गैला--“हागें! घर उे गिन किमी कारु के की है गया।”
भनुधु के मुठ-ममुठ ढल के हेग हागृवम हेगने की पठुडे है। कहा
गया है कि--

एिम रावु का दृज डिक्लुए घा, मभुदु पागें घी, बेसू राबम घे,
कुगेर मे मद्रए एन भिला घा, एे भुयं मुहुपाद की राएनीडि
का भरान पडिउ घा, वरु सी दृहुगृ मे विपडि के एक मे पिम
गया। एर सी टोपे कि--

मंण, कुठहा एर डीन मुने वाली राएकतृ--वे डीने कद के मभुप
उपडिउ केकर मनुय मे सी भिस्त्रि के पूपु काग।

भुवळुभिस्त्रि गैला--“घर कैमे ?”

उमने कहा--

मनुवाट - कुलपीप पर